उषा-गीत

(कविता-संग्रह)

लेखिका

श्रीमती [illegible] देवी [illegible]

संग्रहकर्त्ता

श्रीयुत 'अरुण' बी० ए०

प्रकाशक

अवध पब्लिशिंग हाउस,

लखनऊ.

11468

मूल्य
दो रुपया आठ आना

मुद्रक
भार्गव-प्रिंटिंग-वर्क्स,
लाटूश रोड, लखनऊ.

कविता-क्रम

उषा-गीत

उषा-गीत

उषा-गीत

•

दिवस का स्वागत निशि-अवसान ,
उषे ! तेरा यह नियमित खेल !
नहीं क्या तेरे चंचल नयन ,
देख सकते हैं इनका मेल ?

प्रकृति से मिला तुझे सम्मान ,
और दिनकर का मधुर मिलाप ,
किन्तु क्या यही विजय प्रतिबार ,
बनेगी औरों को अभिशाप ?

याद है—अभी, क्षणों के बाद ,
अंक में प्रियतम के चुपचाप ,
तुझे भी हो जाना है लीन ,
मिलन बन जायेगा अनुताप !

उषा-गीत

ताप में जल जाना क्या प्रेम ?
ताप में क्या मिटती है प्यास ?
ताप में शीतलता का ज्ञान ?
ताप म कहाँ तृप्ति का वास ?

ताप को अपना कर अभिमान !
सुनहले स्वप्नों पर उल्लास !
एक नश्वर छाया के गीत !
उषे ! जविन का यह उपहास !

बिखरती किरणों का छवि-जाल ,
अभी मोहक है मधुर विकास !
किन्तु अस्थिरता का सन्देश ,
दे रहे मौन पवन-उच्छ्वास !

स्वर्ण-निर्मित यह सुखद प्रभात ,
छू रहा तेरा कोमल गात ,
और बेसुध-सी तू अनजान ,
देखता है इसके रँग सात !

सात पीड़ाओं का संकेत !
सात प्रहरों का दुःखद वियोग !
सात विष-चुम्बन, सात विषाद !
यही है सात क्षणों का भोग !

वासना का यह मुक्त-प्रवाह ,
उमंगों के कौतुक का ज्ञान ,
एक विनिमय का प्रतिपल ह्रास !
एक नश्वर-गति का अनुमान !

उषे ! हँस ले तू अन्तिम बार !
हँसी की इति है एक विलाप !
देख ले यही नियति की चाल ,
बनेगी तुझे एक अनुताप !

कविते ! तूने प्यार किया है ?

•

मन के इन कोमल भावों से ,
क्या अपना शृंगार किया है ?
कविते ! तूने प्यार किया है ?

वाणी में संकेत न पाया ,
मधुर कल्पना को अपनाया ,
आँखों की भाषा में किसके
जीवन का सञ्चार किया है ?
कविते ! तूने प्यार किया है ?

नहीं 'आदि-कवि' का वह स्वर है ,
और न भावुक 'रत्नाकर' है ,
किसकी करुणा से प्रेरित हो ,
तूने हाहाकार किया है ?
कविते ! तूने प्यार किया है ?

•:•

क्रय-विक्रय

•

उस भरी हाट में मैंने,
जाकर के इतना देखा।
व्यापारी थे, ग्राहक थे,
था क्रय-विक्रय का लेखा।

दोनों ही लाभ-व्रती बन,
अपनी-सी सोच रहे थे।
तृष्णा के हाथों अपने,
हृदयों को नोच रहे थे।

कम और अधिक की सीमा,
लेने-देने की हठ थी।
सोने-चाँदी की झनझन,
मानो आधार-कमठ थी।

नैतिकता के मन्थन में ,
निज स्वार्थ-अमृत पाने को ,
सब कोलाहल करते थे ,
कुछ और-और लाने को ।

कुछ झगड़ रहे थे मानो ,
वर्षों का वैर चुकाते ,
कुछ मीठे सम्भाषण से ,
थे चोखा लाभ उठाते ।

जब धन की मर्यादा का ,
था, प्रश्न सामने आता ,
कोई फूटी कौड़ी को ,
किञ्चित न कभी पतियाता ।

कैसी वह हाट सजी थी ,
था रंग वहाँ का चोखा !
अविवेक-तुला पर देखा ,
मन का व्यापार अनोखा !

फिर लोभ और तृष्णा की ,
वह प्यास न बुझने आई ।
विश्वासरहित जीवन की ,
सीमा भी कुछ सकुचाई ।

अन्याय-पवन के झोंके ,
बढ़ बढ़ कर आ टकराते ,
पथ के रजकण उड़ उड़कर ,
कुछ अपनी बात सुनाते ।

वे कहते—"री मानवते !
हमसे भी तुच्छ बनी तू ?
पदतल में पड़ लोटेगी ,
विस्मृत सी धूलि-सनी तू !"

न्याय

•

काँटों पर मधुकर को आते
कभी किसी ने देख न पाया !
अन्धकार में अपनी छाया
का किसने अनुमान लगाया !

सूखे तरु पर खगवृन्दों को
कभी लगाते देखा मेला !
या दीपक के बुझ जाने पर
आया कोई शलभ अकेला !

इसी विषमता ने ही जग को
मिटने का वरदान दिया है,
और अनश्वरता की गति ने,
हँसने का अभिशाप लिया है।

•••

अवरोध

•

युगों-युगों की विस्मृत गाथा,
युगों-युगों के गीत,
जिनमें जग की हार छिपी है,
और किसी की जीत।
कवि! रहने दे अरे! खोल मत
ये अतीत के पृष्ठ!
जिनको बन्द हुए कितने ही
गये यहाँ युग बीत!

बीतती आई हैं सदियाँ,
बीतते हैं युग-युग से वर्ष,
स्वर्ण-दिवसों का वह अवसान!
पतन में मिला हुआ उत्कर्ष!
पतन से प्रेरित एक उमंग!
पतन में भी है कितना हर्ष!

•

—और पतन में युगों-युगों से
मिला एक अनुराग !
कवि ! अपनी कम्पित वाणी से
मत कहना—अब जाग !
विस्मृत बन कर ही रहने में
यहाँ मिलेगी शान्ति ,
सोनेवालों के भविष्य से
टूट चुके सब ताग !

जिसे तू कहता है—बन्धन !
वही है वैभव का शृंगार !
सुप्त जीवन के दो क्षण और ,
व्यर्थ है कोलाहल से प्यार !
सत्य की परिभाषा से परे ,
एक कौतुक है हाहाकार !

•

सीमित है गति, प्रगति मौन है ,
मौन हृदय के तार !
युगों-युगों से किसने इनकी
सुनी करुण झन्कार ?
एक मींड़ में कभी गूँजता
पीड़ा का संगीत !
शत-शत कण्ठों से विरोध की
उठती एक पुकार !

न जाने कैसा यह अविवेक !
और स्वप्नों-सी एक उमंग !
व्यर्थ है स्वर्ग कुसुम की चाह ,
व्यर्थ है यह ममत्व का रंग !
हिमालय से टकराने चली ,
आज सरिता की क्षुद्र तरंग !

•

मिट न सकेगा कभी नियति का
नियमित अमिट विधान !
शिशु की क्रीड़ा-सा अस्थिर यह
भ्रम है झूठा मान !
जिसके इंगित पर सुषुप्ति के
सुख का होता अंत ,
वह दीवानों की भाषा का
नहीं इष्ट है ज्ञान !

ज्ञान का वह उच्छृंखल रूप !
उसे मत कहना कभी विवेक !
भिखारी चला आज करने ,
अरे ! सम्राटों का अभिषेक !
पंगु के मन में कैसी उठी ,
मेरु को छू लेने की टेक !

•

सुन ले कवि ! तू कर न सकेगा ,
इस मति का प्रतिवाद ,
तेरे करुण-स्वरों को समझा
सबने यहाँ प्रमाद !
यहाँ भावनाओं का कोई
नहीं चुकाता मोल !
अवहेलित है यहाँ आदि से ,
उस अतीत की याद !

मान-अपमान एक सा यहाँ ,
यहाँ है लघुता का संतोष !
नहीं आघातों से होता ,
किसी को औरों पर कुछ रोष !
कि जिनके रत्नों के भाण्डार ,
खोजते वे रजकण के कोष !

•

इस विडम्बना को न समझने
का जग को अवकाश ,
और कठिन होते जाते हैं
ये ममत्व के पाश ।
अपने हाथों आप बुना है ,
यह सुषुप्ति का जाल !
अथ-इति के परिचय का अंतिम
क्षण है एक विनाश !

अरे कवि ! यह भी है इतिहास !
पूर्व-गौरव स यदि प्रतिकूल ,
किन्तु है इसका भी संकेत !
मुक्ति के पथ की पहली भूल ,
फूल से सब करते हैं प्यार !
किन्तु प्रिय होता किसको शूल ?

दृश्य

•

अस्थि-चर्म अवशिष्ट एक वह
काया थी मुरझाई-सी।
पूर्ण कर रही श्वास श्रमित-से
जीवन के सकुचाई-सी।
वक्र काल-गति से दो कर,
उठे गिरे क्षण में सत्वर !

मैंने पूछा—राही ! तूने कितना
पथ है पार किया ?
बोला—जितना मुझे भाग्य ने
चलने का अधिकार दिया !
आँखों में भर आया जल,
ठिठक रहा वह वहीं अचल !

पुनः प्रश्न—कैसी आशा यह
खींच रही जीवन की डोर ?

उत्तर मिला—अभी आयेगी
दुख में सुख की एक हिलोर !
बुझे हुए मुख-दीपक पर ,
आई ज्योति एक क्षण भर !

मैंने सोचा—अप्रिय सत्य है एक ,
न कहना ही उपकार ।
एक तन्तु से बँधा हुआ है
अखिल विश्व का सब व्यापार ।
झूठी आशा झूठा भ्रम !
भ्रम है जीवन केवल भ्रम !

पराजय

•

गीतों की गति नहीं, नहीं है
मुक्त, स्वरों की चाल !
प्राणों का कम्पन सीमित है ,
सीमित है यह काल !
फिर असीम से मिल जाने का ,
मानव ! तुझे विराग ?
सीमित अंकों से सीमित है
जब यह तेरा भाल !

सुन ले, कहती रहतीं लहरें ,
सरिता से नित—चल-चल !
और शून्य में अनिल मचाता
रहता प्रतिक्षण हलचल !
दिवस-निशा सब चलते रहते
एक परिधि है निश्चल !

सग्रह

पर तू मानव ! छोड़ न पाता
विश्व-प्रिया का अञ्चल !

दावानल ने सुना कभी
तरुओं का करुण - विलाप ?
सरिता ने कब किया ध्वंसकर
कूलों को अनुताप ?
यह विनाश का खेल सबल-
निर्बल का चिर-संघर्ष !
इसकी परिभाषा को मानव !
क्यों कहता है पाप ?

आज रुदन यह रुक न सकेगा !

हँसने दो हँसनेवालों को ,
आज रुदन यह रुक न सकेगा !
पीड़ा के आकुल श्वासों से ,
एक नया संसार बसेगा !
आज रुदन०

मन की हाट बिकेंगे आँसू ?
आँसूवाले लेंगे आँसू ?
अपनेपन के भाव यहाँ पर ,
कौन भला अपनापन देगा ?
आज रुदन०

बिखर बिखर घन-नयन बरसते ,
जिन पर हँसनेवाले हँसते !
इस निधि को अपने जीवन में ,
संचित कोई रख न सकेगा !
आज रुदन०

आँखों के प्रति

•

उनके मादक नयनों में ,
विष है तो अमृत भी है ;
यदि है प्रकाश तो छाया
का रूप तमावृत भी है ।

ये रूप-तुला के दोनों ,
आधार बनाये किसने ?
अधखिले कमल पर सहसा ,
दो मधुप बिठाये किसने ?

अथवा शशि के आँगन में ,
मृग-शावक दो फिरते हैं ;
या क्षीर-सरोवर में ही ,
दो राजहंस तिरते हैं ।

संकेतों में रहता है,
जीने मरने का लेखा;
विधि के अंकों पर इनकी,
खिंचती है काली रेखा।

इनके पथ पर आने की,
कामना सभी को होती;
जीवन के बदले बिकते,
अनमोल यही दो मोती।

इनके द्विगुणित होते ही,
मन का पंछी उड़ जाता;
होता है खेल किसी का,
कोई रोता पछताता।

इनके इंगित पर कितने,
हृदयों में उठता रव है!
पर, सुना मौन ये रहते,
इनकी भाषा नीरव है!

जीवन-सुख मिलता इनसे ,
ये मरण-विधान बनाते ;
अपनी तीखी मदिरा से ,
बेसुध करके इठलाते ।

यह युगों-युगों का क्रम है !
इनसे मिलकर दुख पाना !
छलने की रीति पुरानी !
इनका इतिहास पुराना !

कवि के भावों की सीमा ,
कब इनको छू पाती है !
इनकी छवि के आगे तो ,
कल्पना ठिठक जाती है !

वे और मैं

•

जब वे मुझसे दूर हुए
तब मैंने उनको पहिचाना ;
मानी वे भरपूर हुए ,
जाना मैंने उनका जाना ।

सोच रही हूँ—मान करूँ !
आयें मुझे मनाने आयें !
या उनके गुण गान करूँ !
तो सम्भव है मुझे बुलायें !

नहीं-नहीं यह तो भ्रम है !
मुझमें उनमें अन्तर कैसा ?
क्रम से भी सीमित क्रम है !
शाप हृदय को है वर जैसा !

∴

प्रतिशोध

•

नक्षत्रों के दीप जले तो ,
निशि-बाला ने घूँघट डाला ।
श्याम घनों में लुकते छिपते ,
ढुलका दी निशिपति ने हाला ।

मधु-घट की वे अगणित बूँदें ,
मलयानिल ने आज समेटी ।
आते देख उसे सकुचाकर ,
बन्द किये दृग कलियाँ लेटी ।

नीरवता के उस प्रदेश में ,
भौंरों की गुञ्जार नहीं थी ।
मलयज के स्वागत की वेला ,
एक नया त्योहार नहीं थी ।

कोना कोना खोज चुका तब
किशलय-दल को हँसते देखा।
जिनके अधरों पर खिंचती थी,
शशि किरणों की उज्ज्वल रेखा।

उस सुषमा के छू लेने को
मलयानिल ने हाथ बढ़ाया।
किशलय-पट की ओट किसी ने
कम्पित-स्वर संगीत सुनाया।

"यहाँ न आना ठहरो! यह है
कँगलों की छोटी सी बस्ती!
स्वागत के वैभव से कोसों
दूर फ़क़ीरी की यह मस्ती!

"सम्राटों को शोभा देगी
क्या पत्तों की सेज कँटीली?
और न सेवा के कुछ साधन,
दुख देगी यह रात रँगीली!

"देश देश के पथिक ! भला क्या
क्षण भर यहाँ विराम रहेगा ?
चिर-परिचित यह सूनापन है ,
यही हमारा धाम रहेगा !

"जाओ, व्यर्थ यहाँ आना है ,
अवहेलित हमको रहने दो ।
अपने जीवन की धारा में ,
हमें पृथक रहकर बहने दो ।"

कम्पित होकर कहा समीरण
ने, "मेरा अधिकार न भूलो !
उपवन की रानी ! तुम इतनी
अपनेपन पर आज न फूलो !

"ज्ञात नहीं, मेरे ममत्व के
सुख का तो संसार यही है !
मेरी इच्छाओं से परिचित
हो, मेरा उपकार यही है !

"मान न कर पाओगी बाले !
छिपने में कल्याण न होगा !
मेरे उर की प्यास बुझाये
बिना तुम्हारा त्राण न होगा !"

इतना कहकर, उस निष्ठुर ने
कर डाली अपनी मनमानी !
बिखरी पंखुड़ियों को लेकर,
सिसक पड़ी फूलों की रानी !

किशलय-दल ने फेर लिया मुँह,
उसको यह व्यापार न भाया !
छेड़ छेड़ कर अत्याचारी
ने, कलियों को ख़ूब रुलाया ।

असमय ही जब शाखाओं का,
छूट गया वह एक सहारा ।
म्लानमुखी उपवन - बालाओं
ने उस जग मे किया किनारा ।

बोलीं—"कोमल होने का ही
हमको यह परिणाम मिला है !
सौरभ नित्य लुटाने पर यह
कठिन भूमि-विश्राम मिला है !

"चार दिनों में इसी धूलि से
मिलकर ही प्रतिशोध मिलेगा !
शीश चढ़ेंगी उसके जो फिर
पैरों से हमको कुचलेगा !"

∴

सौदा

•

क्यों बुला रहे हैं बार बार ,
मेरे अतीत के स्वप्न दूर ?
जब आशाओं का महल यहाँ ,
हो गया अचानक चूर चूर !

जब जीवन-सरिता की गति में ,
आया विराम भी निकट आज ,
जब एक श्वास में मिलने को ,
आकुल निश्वासों का समाज !

तब किसके आने की आहट ?
यह कौन पूछता यहाँ सदय ?
"मैं हृदय बेचता, कोई ले ,
देकर टूटा-सा एक हृदय !"

•••

विभूति

•

नहीं लेखनी लिख पाती है,
मन के भावों का इतिहास।
संशय है, जग उसको समझे,
अपनी ममता का उपहास!

औरों के इंगित पर चलने
का, इसको है चिर-आदेश।
इसीलिये मुख मासिमय करके,
विकृत किया है अपना वेश!

अब तो इसको होता जाता
है, अपने बन्धन से प्यार!
पंख बँधे पंछी को जैसे,
प्रिय हो पिंजड़े का सत्कार!

•:

कामना

•

शृंगार नहीं प्रिय फूलों का ,
काँटों का हार मुझे लाना ।
रंगीन दुकूल नहीं भाते ,
पहना दो केसरिया बाना ।

ये रतनजटित कंकण फेंको ,
अब रणकंकण बाँधो मेरे ।
किंकिणि के बदले कटि में भी ,
कस दो असि-बंधन के फेरे ।

कुंकुम के बदले रिपुओं के ,
शोणित का भाल-तिलक दूँगी ।
नूपुर का रुनझुन त्याग चुका ,
पदत्राण कठोर पहन लूँगी ।

मैं वीर-प्रसविनी वीर-प्रिया,
रणविमुख नहीं मुझको रहना।
जब जन्मभूमि पर संकट हो,
तो उसके हित संकट सहना।

इन प्राणों का क्या मोल, कहीं
इनको देकर अमरत्व मिले।
जननी के चिर-दुःख पाश कटें,
मर कर अपना यदि स्वत्व मिले।

बादल की बात

•

वह कौन देश है जलधर !
आये तुम आज जहाँ से ?
रँगने को अपनी काया ,
पाया यह रंग कहाँ से ?

तुमने असीम सागर को ,
क्या पंखों से मथ डाला ?
या भेद व्योम के उर को ,
यह गहरा रंग निकाला ?

या असित कमल ही लाखों ,
हाथों से मल डाले हैं ?
काले सपक्ष विषधर क्या ,
वारिद ! तुमने पाले हैं ?

क्या कालकूट पर्वत पर ,
थक कर विश्राम किया था ?
या अमा-निशा ने अपना ,
तुमका शृंगार दिया था ?

कज्जल की शून्य गुफा में ,
अथवा तुम भाग लुके थे ?
विद्युत के भय से, तम की
बस्ती में भूल चुके थे ?

किस व्यथित विरहिणी का तुम ,
ले चले सँदेसा बोलो ?
गम्भीर घोष से मन का ,
अपने रहस्य तो खोलो ?

या किसी यक्ष विरही के ,
तुम दूत बने जाते हो ?
क्षण भर विराम लेने से ,
जो इतना घबराते हो !

अथवा तुम आमन्त्रित हो ,
मरुथल में जा वरसोगे !
या किसी शुष्क पर्वत के ,
उर में अमृत भर दोगे !

क्या स्वाती की बूँदें ले ,
तुम खोज रहे चातक-दल ?
या पवन-झकोरों से ही ,
हो तोल रहे अपना वल ?

अथवा दुखियों की आहें ,
अभिशाप वना कर लाये ?
भूतल को आज डुबोने ,
तुम प्रलय-दूत वन आये ?

पर लघु-महान का अन्तर ,
वादल ! तुम जान न पाते !
जग को जीवन देते हो ,
तुम अमृत-वारि वरसाते !

वरदान तुम्हीं से पा कर ,
यह प्रकृति फूलती फलती !
चर-अचर सृष्टि भी सारी ,
सुख पाती और पनपती !

तुम मृगशावक से नभ में ,
हँस हँस कर क्रीड़ा करते !
विद्युत का हार पहन कर ,
स्वच्छन्द समोद विचरते !

तुम क्या जानो बन्धन की ,
अनुभूति निराली होती !
प्रतिक्षण जिसके इंगित पर ,
मानवता हँसती रोती !

बादल ने नत मस्तक हो ,
यह कहा—"सुनो क्यों आया ,
मिटनेवालों की मैंने ,
देखी है अन्तिम छाया !

"अनुभूति-रहित होने का,
मुझको अपवाद न देना,
पहले मेरी यह गाथा,
तुम धैर्य्य सहित सुन लेना!

"वह दूर देश था जिसमें,
पशुता की पीड़ित बस्ती!
कंकालों पर हँसने की,
मानवता को थी मस्ती!

"भूखे - नंगों का शोणित,
पी पी कर प्यास बुझाते!
देखा कुछ सौदागर थे,
धोखे की हाट लगाते!

"कारागृह थे, शूली थी,
उनके हित जो कुछ कहते!
कुछ पड़े शृंखलाओं में,
जकड़े, असीम दुख सहते!

"उनकी आँखों में देखा ,
निश्चय था एक समाया ,
जो छोड़ चुके थे तन की ,
जीवन की सारी माया !

"नर-मेध यज्ञ में उनकी ,
आहुतियाँ पड़ने लगतीं !
तब अग्निकुण्ड में सहसा ,
शत-शत ज्वालायें जगतीं !

"उनसे सुदूर नभ-पथ पर ,
होता था क्षणिक उजाला !
मैंने भी एक लुटा दी ,
विद्युत की सुन्दर माला !

"पर काम न उन वीरों के ,
किंचित भी यह तन आया !
अनुताप-दग्ध हो इस पर ,
तब काला रंग चढ़ाया !"

जाते हो बादल ! जाओ !
उस पार क्षितिज के रहना !
कोई यदि तुमसे पूछे,
यह करुण-कहानी कहना !

गीतों में संगीत कहाँ है,
केवल है मन की छाया!
कवि! तेरे स्वप्नों का जग ने,
विस्मृति से परिचय पाया!

—*"चकोरी"*

उषा-गीत

गीत

मैं खेल न ऐसा खेलूँगी !

मुट्ठी भर लेकर धूल रचा,
तुमने अपना छोटा-सा घर !
मेरा पत्तों का महल भला
क्यों लगता नहीं तुम्हें सुंदर ?
तुम फूँक फूँक कर गिरा रहे
इसको, मैं बदला ले लूँगी !

पत्ते पत्ते में प्यार यहाँ,
वह कहाँ तुम्हारे रजकण में ?
पैरों से कुचली हुई राशि !
सत्कार कहाँ जो है तृण में ?
अब कभी न हँसना देखो यह
उपहास न अब मैं झेलूँगी !

गीत

•

तुम चुप हो, मैं क्यों बोलूँ ?

मुस्कान नहीं, है मान यहाँ !
तुम रूठोगे, अभिमान यहाँ !
दृग बन्द हुए, क्यों खोलूँ !

श्वासों में एक पुकार यहाँ,
केवल मन का उपहार यहाँ,
इसको जीवन से तोलूँ !

तुम चुप हो, मैं क्यों बोलूँ ?

गीत

•

तुम जीत गये मैं हारी !

देव ! निठुर कितने हो, कितनी
प्रभुता तुमको प्यारी !
भक्ति-पाश में बाँध सकेगी,
क्या न साधना सारी ?

तुम महान हो किन्तु यहाँ
भी है उपासना न्यारी !
इन चरणों पर आज हृदय
की ममता मैंने हारी !

तुम जीत गये मैं हारी !

गीत

•

पंछी ! जाकर उनसे कहना !

उन्हें न देखे इन आँखों ने,
सीखा निशि-दिन बहना !
पलक-पींजड़े में इनका तो
कठिन हुआ अब रहना !

पंछी ! जाकर उनसे कहना !

हृदय पूछता—यह वियोग का
दुख है कब तक सहना ?
छल कर चले गये—सुन
पड़ता, जग में यही उलहना !

पंछी ! जाकर उनसे कहना !

गीत

मधुरता का प्रिय कहाँ से ,
यह मधुर वरदान पाया ?

छवि-अमृत का मधुर ! तुमने
क्यों तृपित मुझको बनाया ?
नयन ये आकुल रहेंगे !
मूक होकर क्या कहेंगे ?
साधना का फल मिला क्या ?
वर नहीं, अभिशाप पाया !

मधुरता का प्रिय कहाँ से ,
यह मधुर वरदान पाया ?

गीत

माँ ! मैंने हँस हँस कर पहने !
प्यारे हैं लोहे के गहने !

इनको देख न तू कौतुक से !
आते घन नयनों में झुक से !
आँसू व्यर्थ नहीं हैं बहने ,
माँ ! मैंने हँस हँस कर पहने !

ममता तेरी इन कड़ियों में !
जिसने बाँधा मन लड़ियों में !
झन-झन कर लगती हैं कहने —
प्यारे हैं लोहे के गहने !

मेरा भाग्य बड़ा जो पाया,
तेरे हित इनको अपनाया !
माँ ! इनको दे यूँ ही रहने !
मैंने तो हँस हँस कर पहने !

ये हैं मेरे. मैं इनका हूँ !
साथी बना बहुत दिन का हूँ !
सुख-दुख साथ सभी हैं सहने !
प्यारे हैं लोहे के गहने !

इनके गीत सुना करता हूँ !
जीवन में जीवन भरता हूँ !
मुझको देना नहीं उलहने !
माँ ! मैंने हँस हँस कर पहने !

प्यारे हैं लोहे के गहने !

गीत

•

कोई भीख न देने आया !

गली गली मैं फिरी किसी ने
मुझको नहीं बुलाया ,
द्वार द्वार देखा पर कोई
दाता एक न पाया !

माताओं ने अपने लालों
को क्यों हाय ! छिपाया ?
युवकों ने चूड़ियाँ पहन कर
कुंकुम भाल लगाया !

बहनों ने भी भ्राताओं को
कायर कठिन बनाया !
कुल-ललनाओं ने पतियों को
क्या रस-रंग सिखाया !

इस ममत्व का अन्त कहाँ
है, जिसने जग भरमाया !
किस मदिरा का घूँट नियति
ने, सबको हाय ! पिलाया !

एक एक रज-कण ने रो कर
यह सन्देश सुनाया !
मातृभूमि का ऋण न किसी
ने, हँस कर आज चुकाया !

कोई भीख न देने आया !

उच्छ्वास

गीत

•

आई अलि के द्वार ,
कली कर शृँगार !
मन मिलन - चाह ,
गई भटक राह ,
प्रिय - दृग निहार !

आई अलि के द्वार !

गति - मति - वियोग ,
तन - विरह - रोग ,
चली कर पसार !

आई आलि के द्वार ,
कली कर शृँगार !

•:

उषा-गीत

गीत

•

तुम धीरे धीरे गाते !

बादल ! बोलो, यह मधुर मधुर
किसका सन्देश सुनाते ?
क्यों मौन हुए——क्या श्रम से
तुम भी कभी कभी थक जाते ?

तुम धीरे धीरे गाते !

मैं राह देखती रही नहीं क्यों
प्रियतम मेरे आते ?
किसलिए बताओ बादल ! तुम
कुछ कहते हो सकुचाते ?

तुम धीरे धीरे आते !

उड़ जाओगे, यदि कहीं मुझे
भी पंखों पर बिठलाते !
हम दोनों अपने गीतों से ,
फिर उन्हें मनाकर लाते !

तुम धीरे धीरे गाते !

गीत

•

क्यों अमृत को विष बनाया ?

पुण्य के वरदान को क्यों
पाप से सीमित किया है ?
साधना के मुक्ति-पथ को,
रूप माया का दिया है !
वञ्चना है इष्ट—कह दो,
सरल यह व्यापार पाया !

नियति तो है फिर भला पग
एक विचलित कौन होगा ?
आत्मगति का फल यहाँ
किसने नही प्रतिकार भोगा ?
किन्तु यह आधार का भ्रम,
किस तरह मन में समाया ?

क्यों अमृत को विष बनाया ?

•••

उषा-गीत

छन्दों में सीमित करने का,
कविते ! तुझको किया प्रयास ।
तेरे वर का मुझे सदा ही
रहता है अविचल विश्वास !

—"चकोरी"

उषा-गीत

प्रश्न

•

भूप को बनाते क्षण भर
में तुम्हीं तो रंक,
रंक का समोद अभिषेक
कर देते हो !
भृकुटि - विलास से सुमेरु
तृण होता, और
तृण भी सुमेरु से
अनेक कर देते हो !
नाथ ! ये तुम्हारी अनुभूति
किसको है, तुम
सीमित जगत का
विवेक कर देते हो !
एक को अनेक करने की
क्रिया जानते हो,
किन्तु क्यों अनेक को
न एक कर देते हो ?

विडम्बना

•

पूछती निशा है—मुझे कालिमा
मिली क्यों हाय !
दिवस प्रकाश का हुआ
है अधिकारी क्यों ?
दिवस पुकारता है—ताप
से तापित हूँ मैं,
शीतल निशा को बना
दैव उपकारी क्यों ?
सरिता रुदन करती है—
मुझे सीमित कर,
उदधि असीमता का
एक अवतारी क्यों ?
न्याय का तुम्हारे प्रभु !
कुछ तो नियम होगा ?
प्रभुता तुम्हारी प्रभुता से
हुई न्यारी क्यों ?

उद्बोधन

•

भूलता है मानव न बैठ
अविवेकी बन,
रो कर किसी ने भला
राज कब पाया है?
जग है उसी का स्वीय
बल से पराक्रम से,
जिसने चरण नीचे
जग को झुकाया है!
जीवन - मरण की तुला
है, कर्म - शील ने ही,
अधिकार का सुख
समोद अपनाया है!
माता के ललाट से
तिलक दासता का अभी,
अपने लहू से क्यों न
तूने धुलवाया है?

•:

जिज्ञासा

•

साधन निवृत्ति के नहीं हैं
न प्रवृत्ति ही है,
चारों ओर विस्तृत है
भ्रम का कठिन जाल !
एक एक पग है दुरूह,
दूर देखता है,
गति को नियति - चक्षुओं
से प्रतिक्षण काल !
प्रेरित न जाने किस
शक्ति से निरन्तर ही,
कर्म के कुअंक कौन
लिखता अमिट भाल ?
किसने न जाने अनायास
प्रति मानव को,
दे दी याचनों में यह
जीवन - मरण माल !

•

दुख हैं अपार विश्व
काँपता है व्याकुल हो,
पीड़ा का अगाध सिन्धु
नित लहराता है;
तुमने बनाया अनुगामी
जिसको भी वही,
माया के प्रवाह में
पृथक बह जाता है।
ताप हैं त्रिविधि, वञ्चना
है, अवहेलित हो,
मानव विषाद को
सहज अपनाता है;
कैसी ये विडम्बना है
नाथ! बतला दो कौन,
खोजता तुम्हें है और
कौन तुम्हें पाता है?

•:

उषा-गीत

चित्तौड़ का कीर्तिस्तम्भ

•

किस लुप्त अतीत के खोजने को
नभ को चुपचाप निहारते हो ?
या निशीथ की शून्यता में तम से ,
अपना अब रूप सँवारते हो !
इस पुण्य-धरा की, खड़े हुए क्यों ,
तुम आरती नित्य उतारते हो ?
विजयी ! जय-मार्ग प्रदर्शक से ,
किसको तुम आज पुकारते हो ?

किस वीरता के परिचायक हो ,
किसने तुम्हें गौरव, मान दिया ?
किसके करों ने किया निर्मित्त और
स्वदेश का प्रेम महान दिया ?

युग कौन सा था जिसने तुम्हें ही ,
मदा को अपना यश-गान दिया ?
किसने यहाँ मृत्यु को भेंट समोद
तुम्हें अमरत्व का दान दिया ?

वह कीर्त्ति तुम्हारी कहाँ छिपी है ,
ये समाधियाँ क्या बतला सकेंगी ?
इस जीर्ण कलेवर के गत वैभव
की छटा क्या दिखला सकेंगी ?
सतियों की चितायें जहाँ जली थीं ,
उसी राख से आँख मिला सकेंगी ?
यहाँ भग्न शिलायें कभी किसी को
क्या अतीत की याद दिला सकेंगी ?

इतना तो हमें बता ही सकोगे, वे
प्रताप से वीर कहाँ मिलेंगे ?
जिन्हें स्वर्ग से प्यारी स्वदेश की
भूमि थी, वे रणधीर कहाँ मिलेंगे ?

रिपुओं के रहे उर सालते जो
वही तीक्ष्ण से तीर कहाँ मिलेंगे ?
वही केसर के रँग से रँगे, जौहर
के शुभ-चीर कहाँ मिलेंगे ?

तुम रो रहे क्यों, मत रोना, अभी
ये विषाद के आँसू सुखा सकोगे !
अपने इसी जीर्ण-कलेवर में नई
शक्ति किसी दिन ला सकोगे !
निज देश के गौरव से तुम भी,
अपना फिर गौरव पा सकोगे !
ये सुषुप्ति की माया हटा करके
यदि जागृति-मार्ग दिखा सकोगे !